आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के साहित्य संबंधी विचार

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने हिंदी साहित्य को अपने विचारों से निरंतर समृद्ध किया। ये बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। साहित्य की अनेक विधाओं में इन्होंने लेखन किया है। ये एक सफल उपन्यासकार, निबंधकार, इतिहासकार और मूलतः आलोचक के रूप में जाने जाते हैं। इनका जन्म सन् 1907 में उत्तर प्रदेश के बलिया जिले के दुबेका छपरा नामक गाँव में हुआ था। सन् 1930 में रवींद्रनाथ ठाकुर के शांतिनिकेतन में अध्यापक के रूप में पहुँचे। संस्कृत के विद्वान तो थे ही यहाँ आकर इन्होंने प्राकृत और बांग्ला भाषाएँ भी सीखीं। साथ ही इन्होंने भारतीय दर्शन, इतिहास और पुरातत्व इत्यादि का भी गंभीर अध्ययन – मनन किया। शांतिनिकेतन में ही इनका परिचय क्षितिमोहन सेन, भारतीदास चतुर्वेदी, विधुशेखर भट्टाचार्य आदि साहित्यकारों के साथ हुआ। साहित्यकार मित्रों के सान्निध्य में ये साहित्य – रचना की ओर प्रवृत्त हुए। सर्जनात्मक लेखन के साथ – साथ शोधपरक लेखन में भी निरंतर सक्रिय रहे। आदिकाल और पुरातत्व से संबंधित वृहद शोधकार्य हेतु इन्हें सम्मानार्थ डी. लिट् की उपाधि प्रदान की गई। सन् 1958 में भारत सरकार द्वारा इन्हें पद्मभूषण की उपाधि से सम्मानित किया गया। इनकी प्रमुख रचनाएँ हैं –

मौलिक – सूर साहित्य, सूरदास और उनका काव्य, नाथ – सिद्धों की बानियाँ, कबीर, नाथ – सम्प्रदाय (आलोचना)

हिंदी साहित्य: उद्भव और विकास, हिंदी साहित्य की भूमिका, हिंदी साहित्य का इतिहास, हिंदी साहित्य का आदिकाल (इतिहासपरक)

बाणभट्ट की आत्मकथा, अनामदास का पोथा, पुनर्नवा (उपन्यास)

संपादित रचनाएँ – निबंध संग्रह, संक्षिप्त पृथ्वीराज रासो, संदेश रासक।

अनूदित रचनाएँ – पुरातन प्रबन्ध संग्रह, प्रबंध कोश, प्रबंध चिंतामणि, विश्व परिचय, लाल कनेर, मेरा बचपन, महापुरुषों के संस्मरण।

इन्हें अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है, जिनमें प्रमुख हैं –

'बाणभट्ट की आत्मकथा' उपन्यास पर नागरी प्रचारिणी सभा का सर्वोत्तम पदक, महावीर प्रसाद द्विवेदी स्वर्ण पदक।

1973 में साहित्य अकादमी पुरस्कार।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की दृष्टि ऐतिहासिक – सांस्कृतिक है। उन्होंने इतिहास और संस्कृति का गम्भीर अध्ययन किया है। उन्होंने अपने अध्ययन में शोध – कार्य को विशेष महत्व दिया है। इनके शोध की परिधि अत्यंत व्यापक है। इतिहास और वर्तमान के समस्त बिंदुओं पर गहन शोध करने के पश्चात ही निष्कर्ष प्रस्तुत करते हैं। हिंदी साहित्य के प्रथम कालखंड को आदिकाल नाम भी आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने ही दिया है। उनके गहन शोध के कारण ही यह संभव हो सका। उनकी शोधपरक दृष्टि किसी भी विषय को अधिक गहराई तक समझने का मार्ग प्रस्तुत करती है। साहित्य में जिन विषयों को उपेक्षित रखा गया था, आचार्य द्विवेदी ने उनपर भी शोध किया, बहुत अच्छे परिणाम लेकर आए और साहित्य को समृद्ध करते रहे। उनकी ऐतिहासिक – सांस्कृतिक दृष्टि और शोधपरक कार्यप्रणाली तो साहित्य के लिए वरदान साबित हुई ही, इनका भाषा – पांडित्य और बहुभाषा ज्ञान भी

साहित्य के लिए नित नए मार्ग खोलने में सहायक सिद्ध हुआ। इतिहास और पुरातत्व में गहरी रुचि के कारण उन्होंने साहित्य के आधार को भलीभाँति समझने में साहित्यप्रेमियों की मदद की। समाज के वृहद स्वरूप का अध्ययन करते हुए वे किसी की उपेक्षा नहीं करते हैं। साहित्य को सर्वजन हिताय का विषय बना देते हैं। हर व्यक्ति साहित्य का विषय है और साहित्य हर व्यक्ति के लिए है, इस विश्वास को आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी दृढ़ता प्रदान करते हैं। द्विवेदी जी सामाजिक वैषम्य का विरोध और सामाजिक साम्य का समर्थन करते हैं। आदिकालीन और मध्यकालीन साहित्य को समझने के लिए भी उन्होंने व्यापक और उदार दृष्टि दी। कबीर के साहित्य में भावपक्ष के साथ साथ भाषा पक्ष को भी उन्होंने स्वयं नई दृष्टि से देखा और साहित्यप्रेमियों को भी दिखाया। उन्होंने कबीर को वाणी का डिक्टेटर कहा और सचमुच इनके इस कथन से कबीर के साहित्य को समझने में सहजता आई। आचार्य हजारीप्रसाद के विचार एवं शोधपरक कार्यप्रणाली से साहित्य के अध्ययन – अध्यापन को सकारात्मक दिशा मिलती रही है और आगे भी मिलती रहेगी। आचार्य द्विवेदी की शोधपरकता से यह प्रेरणा भी मिलती है कि किसी भी शोध को अंतिम मानकर निष्क्रिय न हो जाएं बल्कि निरंतर शोध करते रहें और नवीन तथ्यों की उद्भावना करते रहें।